साप्ताहिक
Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

Global School Of Excellence, Obedullaganj

वर्ष : 7, अंक : 3 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 8 सितंबर से 14 सितंबर 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

वायु प्रदूषण को रोकने के लिए 34 फीसदी देशों में नहीं हैं जरूरी कानून

नई दिल्ली। दुनिया के करीब एक-तिहाई देशों में वायु प्रदूषण को रोकने के लिए जरूरी कानून नहीं हैं। वहीं जिन देशों में इस तरह के कानून मौजूद भी है, वहां इनमें और विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) द्वारा जारी मानकों में काफी अंतर है। यह कानून काफी हद तक डब्ल्यूएचओ द्वारा जारी गाइडलाइन्स से मेल नहीं खाते हैं। वहीं करीब 31 फीसदी देश ऐसे हैं जिनके पास इन वायु गुणवत्ता मानकों को लागू करने की शक्ति तो है, पर उन्होंने अभी तक इन्हें अपनाया नहीं है। यह जानकारी हाल ही में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) द्वारा वायु गुणवत्ता कानूनों और नियमों पर जारी एक नई रिपोर्ट में सामने आई है, जिसे कल जारी किया गया था।

इस रिपोर्ट में दुनिया के 194 देशों और यूरोपियन यूनियन में वायु गुणवत्ता सम्बन्धी नियमों और कानूनों की जांच की गई है। इसमें इस बात का आंकलन किया गया है कि देश इन मानकों और कानूनों को लेकर कितने सजग है और देशों में इन्हें कितनी गंभीरता से कानूनी तौर पर लागू किया गया है। रिपोर्ट के अनुसार अधिकांश अफ्रीकी देशों में इन मानकों का अभाव है। दुनिया भर में वायु प्रदूषण की समस्या कितनी विकट है, इसका अंदाजा आप इसी बात से लगा सकते हैं कि दुनिया की करीब 91 फीसदी आबादी ऐसी हवा में सांस लेने को मजबूर है जो उसके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। वहीं यदि डब्ल्यूएचओ की मानें तो यह हमारे स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाने वाला सबसे प्रमुख पर्यावरण सम्बन्धी खतरा है।

भारत जैसे देशों में यह एक गंभीर समस्या बन चुका है। इस बारे में शिकागो विश्वविद्यालय के इनर्जी पॉलिसी इंस्टिट्यूट (ईपीआईसी) द्वारा जारी एक रिपोर्ट से पता चला है कि यदि इस पर गंभीरता से ध्यान न दिया गया तो इसकी वजह से हर भारतीय से उसके जीवन के 5.9 वर्ष छीन लेगा। वहीं दिल्ली, लखनऊ जैसे शहरों में यह समस्या कहीं ज्यादा गंभीर हैं। वहां यह आंकड़ा 9.5 वर्ष से ज्यादा है। स्टेट ऑफ ग्लोबल एयर 2020 के अनुसार भारत में 1,16,000 से भी अधिक शिशुओं की मौत के लिए वायु प्रदूषण जिम्मेवार था, जबकि इसके चलते 2019 में करीब 16.7 लाख लोगों की जान गई थी। वायु प्रदूषण महिलाओं, बच्चों और बुजुर्गों को कहीं ज्यादा प्रभावित कर रहा है। हाल में किए कुछ अध्ययनों से यह भी पता चला है कि वायु प्रदूषण के चलते कोविड-19 का जोखिम कहीं ज्यादा बढ़ सकता है। साक्ष्य मौजूद हैं वायु प्रदूषण न केवल दुनिया भर में होने वाली अनेकों मौतों के लिए जिम्मेदार है बल्कि इसके चलते लोगों के स्वास्थ्य का स्तर भी लगातार गिरता जा रहा है। आज इसके कारण दुनिया भर में कैंसर, अस्थमा जैसी बीमारियां बढ़ती ही जा रही हैं। इसके चलते शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य भी गिरता जा रहा है, परिणामस्वरूप हिंसा, अवसाद और आत्महत्या के मामले बढ़ते जा रहे हैं।

डब्ल्यूएचओ के मानकों से मेल नहीं खाते देशों के कानून- गौरतलब है कि डब्ल्यूएचओ ने वायु गुणवत्ता को लेकर जरूरी दिशानिर्देश बहुत पहले ही जारी कर दिए थे, पर उन्हें अभी भी वैश्विक स्तर पर लागू करने के लिए कोई कानूनी ढांचा नहीं है। रिपोर्ट से पता चला है कि करीब 34 फीसदी देशों में वायु गुणवत्ता को लेकर अभी तक जरूरी कानून नहीं है। जहां कानून है भी वहां इन मानकों की तुलना करना मुश्किल है। केवल 49 फीसदी देशों ने वायु प्रदूषण को एक खतरे के रूप में मान्यता दी है। वहीं वैश्विक स्तर पर जिन देशों में वायु गुणवत्ता को लेकर जारी मानकों को अपनाया गया है वो भी डब्ल्यूएचओ के मानकों से मेल नहीं खाते हैं वहां देशों ने इन्हें अपने आधार पर तय किया है। उदाहरण के लिए डब्लूएचओ ने हवा में पीएम 2.5 की गुणवत्ता के लिए जो मानक तय किया है वो 10 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर है। वहीं भारत सरकार ने पीएम 2.5 के लिए 40 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर का मानक तय किया है। हाल ही में अंतर्राष्ट्रीय एनजीओ ओपन एक्यू द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार भारत सहित कुल 30 देशों की सरकारें एयर क्वालिटी का रियल टाइम डाटा इकट्ठा तो करती हैं, लेकिन इसके बावजूद वो पूरी जानकारी पारदर्शिता के साथ उपलब्ध नहीं कराती हैं। यहां तक कि जिन देशों में यह डाटा सबके लिए उपलब्ध है वहां इसके फॉर्मेट में इतनी विभिन्नता होती है, कि उसका ठीक से विश्लेषण नहीं किया जा सकता। यही वजह है कि इन देशों में डेटा होने के बावजूद भी उसका ठीक से उपयोग नहीं हो पता और वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए किए जा रहे उपाय सफल नहीं होते। भारत भी उन्हीं देशों में से एक है। यही नहीं दुनिया भर में मानकों को हासिल करने की जो जिम्मेवारी संस्थाओं को दी गई है वो काफी जर्जर स्थिति में है। केवल 33 फीसदी देशों ने कानूनी रूप से अनिवार्य मानकों को पूरा करने के दायित्वों को लागू किया है। वायु गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए यह जानना जरूरी है कि क्या इन मानकों को हासिल भी किया जा रहा है या सिर्फ बना कर छोड़ दिया गया है। लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि केवल 37 फीसदी देशों ने कानूनी रूप से इसकी जरूरत को समझा है।

भारत में भी साफ हवा की गारंटी नहीं हैं कानून- वायु प्रदूषण एक ऐसी समस्या है जिसकी कोई सीमा नहीं है, आप हवा को बांध नहीं सकते, जिस ओर बयार चलती है वो अपने साथ इस प्रदूषण को भी ले जाती है। इसलिए हमें यह समझना होगा कि यह किसी एक देश का मुद्दा नहीं है बल्कि पूरी मानव जाती की जिम्मेवारी है। हालांकि इसके बावजूद केवल 31 फीसदी देशों के पास सीमा पार से आने वाले वायु प्रदूषण को संबोधित करने के लिए कानूनी तंत्र हैं।

यूएनईपी के कार्यकारी निदेशक इंगर एंडरसन के अनुसार वायु प्रदूषण हर वर्ष 70 लाख लोगों की जान ले रहा है, यदि इसे रोकने के लिए अभी प्रयास न किए गए तो यह आंकड़ा 2050 तक 50 फीसदी बढ़ जाएगा। जिस हवा में हम सांस लेते हैं वो सभी की बुनियादी जरुरत है। ऐसे में सरकारों को चाहिए की वो स्वच्छ और सुरक्षित हवा को बनाए रखने के लिए ठोस कदम उठाए।

रिपोर्ट के मुताबिक यह बात भारत पर भी लागु होती है, जहां वायु गुणवत्ता संबंधी कानून, साफ हवा की गारंटी नहीं हैं। जिसकी एक बड़ी वजह जनता की जागरूकता और इच्छाशक्ति की कमी है। देखा जाए तो भारत में साफ हवा को संविधान के आर्टिकल 21 के तहत एक संवैधानिक अधिकार निर्धारित किया है। जिसे एम सी मेहता बनाम भारत सरकार के मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित किया गया था।

हालांकि देश में कितने लोगों साफ हवा में सांस ले पा रहे हैं यह एक गंभीर और सोचने का विषय है। दिल्ली जैसे शहरों में जहां हर कोई वायु गुणवत्ता को लेकर चिंतित है। ऐसे में सिर्फ कानूनों से काम नहीं चलता, हमें इसके लिए जवाबदेही तय करनी होगी।

सागर - डाउन टू अर्थ

दक्षिण पूर्व एशिया में जंगल की आग से हर साल समय से पहले हो रही हैं 59 हजार मौतें

नई दिल्ली। वन और वनस्पति की आग वायु प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत है और इसके कारण एशिया के कई हिस्सों में गंभीर रूप से वायु की गुणवत्ता खराब हो जाती है। जंगल और वनस्पति की आग को खुले में बायोमास जलने के रूप में भी जाना जाता है, जो सूक्ष्म कण पदार्थ (पार्टिकुलेट मेटर) प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत है। वैज्ञानिकों का कहना है कि दक्षिण पूर्व एशिया में खेती या चराई हेतु जंगल और कृषि भूमि को तैयार करने के लिए इन जगहों पर आग लगा दी जाती है। इस क्षेत्र में आग लगने से हर वर्ष समय से पहले लगभग 59,000 लोगों की मौत हो जाती है। विश्लेषण से पता चलता है कि बायोमास जलने से सबसे बड़ा खतरा स्वास्थ्य पर पड़ता है। जलने के दौरान हवा में छोटे कण फैल जाते है जो लोगों के फेफड़ों तक पहुंच सकते हैं। इस प्रकार की घटनाएं सबसे अधिक उत्तरी लाओस और पश्चिमी म्यांमार के कुछ सबसे गरीब समुदायों में पाई गईं हैं।

यह शोध जर्मनी के लीड्स और यूनिवर्सिटी ऑफ ऑग्सबर्ग की अगुवाई में किया गया है। शोधकर्ताओं ने कृषि और वनों को जलाने पर अंकुश लगाने के उपायों को लागू करने का आह्वान किया। शोधकर्ता कहते हैं कि कृषि और जंगल की आग को रोकना सार्वजनिक स्वास्थ्य प्राथमिकता के तौर पर देखा जाना चाहिए। लीड्स में पृथ्वी और पर्यावरण के स्कूल में रिसर्च फेलो और मुख्य अध्ययनकर्ता डॉ कार्ली रेडिंगटन ने कहा कि खराब वायु गुणवत्ता का अनदेखा स्रोत जिसे अक्सर तवज्जो नहीं दी जाती है, जबकि इनकी प्रदूषण फैलाने में अहम भूमिका होती है, हमने इसकी माप की है। इससे पता चलता है कि आग को कम करने के लिए कार्रवाई की जा सकती है जिससे वायु गुणवत्ता में तेजी से सुधार हो सकता है। रेडिंगटन ने कहा कि हमने पाया कि पूरे दक्षिण पूर्व एशिया में, आग से उत्पन्न वायु प्रदूषण की मात्रा उद्योग, परिवहन और बिजली उत्पादन से इसकी तुलना की जा सकती है। बायोमास जलाने से हानिकारक प्रदूषक निकलते हैं दक्षिण पूर्व एशिया में- म्यांमार, थाईलैंड, कंबोडिया, लाओस, वियतनाम और दक्षिण पूर्व चीन सहित इन देशों में किसान खेती के लिए या जानवरों को चराने के लिए जमीन को साफ करने के तरीके के रूप में जंगलों को जलाते हैं। इस तरह के कामों को अक्सर मानसून की अवधि से पहले, आमतौर पर फरवरी से अप्रैल के बीच अंजाम दिया जाता है। इस अवधि के दौरान, क्षेत्र के एक बड़े हिस्से में मौसम के मिजाज के परिणामस्वरूप तापमान उलटा हो सकता है, एक मौसम संबंधी घटना जो धुएं और उत्सर्जन को फैलने से रोकती है, विशेष रूप से रात में या सुबह के समय के दौरान। आग हानिकारक प्रदूषकों को उत्पन्न करती है, जिसमें पीएम2.5 के रूप में जाना जाने वाला सूक्ष्म कण भी शामिल हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के मुताबिक इन कणों से हृदय रोग, श्वसन रोग और कैंसर की बीमारी तक हो सकती है। शोधकर्ताओं ने वायु गुणवत्ता पर आग के प्रभाव और बीमारी की व्यापकता को मापने के लिए कंप्यूटर मॉडल के साथ वायु प्रदूषण के माप का उपयोग किया।

जलने का मॉडलिंग प्रभाव- विश्लेषण किए गए सभी आंकड़ों में, शोधकर्ताओं ने पाया कि जलने से सबसे बड़ा प्रदूषण उत्सर्जन लाओस, कंबोडिया, थाईलैंड, पूर्वी और पश्चिमी म्यांमार और दक्षिणी बांग्लादेश के उत्तरी क्षेत्र से आ रहा था। मध्य म्यांमार, थाईलैंड, उत्तर वियतनाम और दक्षिण पूर्वी चीन में उत्सर्जन का निम्न स्तर था। शोधकर्ताओं ने मॉडल के द्वारा यह भी पता लगाया कि अगर जलना बंद कर दिया गया तो वायु गुणवत्ता में क्या सुधार होगा। सबसे अधिक उत्सर्जन का अनुभव करने वाले इलाकों में पीएम2.5 सूक्ष्म कणों की सांद्रता 40 फीसदी से 70 फीसदी तक कम हो जाएगी। डब्ल्यूएचओ ने पीएम2.5 के अधिकतम स्तर के लिए अंतरिम वार्षिक लक्ष्य रखा है जो 25 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर है।

जलने से हवा की गुणवत्ता खराब- यदि जलने की प्रथा को रोका जा सकता है, तो शोधकर्ताओं का तर्क है कि डब्ल्यूएचओ के अंतरिम लक्ष्य से अधिक स्तर के संपर्क में आने वाले लोगों की संख्या थाईलैंड में 64 फीसदी, म्यांमार में 100 फीसदी, लाओस में 92 फीसदी और कंबोडिया में 44 फीसदी तक कम हो जाएगी। महामारी विज्ञान मॉडलिंग का उपयोग करते हुए, वैज्ञानिकों ने गणना की कि पीएम2.5 में कमी वायु प्रदूषण के कारण समय से पहले होने वाली मौतों को कम कर सकती है। दक्षिण पूर्व एशिया में, मौतों में 12 फीसदी की गिरावट आएगी, वियतनाम में 5 फीसदी से लाओस में 28 फीसदी और दक्षिणपूर्वी चीन में 3 फीसदी कुल मिलाकर अनुमानित 59,000 समय से पहले होने वाली मौतों को हर साल रोका जा सकता है। उन्होंने पीएम2.5 सांद्रता के खिलाफ गरीबी के आंकड़ों का भी मानचित्रण किया और पाया कि लाओस, कंबोडिया और म्यांमार में गरीब, ग्रामीण आबादी सूक्ष्म कण प्रदूषण के उच्च स्तर के संपर्क में थी। डॉ रेडिंगटन ने कहा यह अध्ययन दक्षिण पूर्व एशिया में वायु गुणवत्ता और मानव स्वास्थ्य पर जंगल और वनस्पति की आग के प्रभावों का पहला विस्तृत आकलन है। अध्ययन से पता चलता है कि वनस्पति और जंगल की आग से वायु प्रदूषण दक्षिण पूर्व एशिया में वायु गुणवत्ता को गंभीर रूप से खराब कर देता है। इन आग की घटनाओं को रोकने से हानिकारक वायु प्रदूषकों के संपर्क में काफी कमी आ सकती है और कई समय से पहले होने वाली मौतों से बचा जा सकता है। इसके अलावा, यह दर्शाता है कि दक्षिण पूर्व एशिया की गरीब आबादी इन आग की घटनाओं के चलते होने वाले वायु प्रदूषण के सबसे अधिक चपेट में आ रही है। अध्ययनकर्ताओं ने कहा कि क्षेत्र में जंगल की आग को कम करने के लिए अब नए प्रयासो की जरूरत है। डॉ रेडिंगटन ने कहा, आग के उपयोग पर पूर्ण प्रतिबंध कई स्थानीय किसानों के लिए व्यावहारिक नहीं हो सकता है जिनके पास कोई विकल्प नहीं है। प्रदूषण उत्सर्जन जंगलों को जलाने से होता है, इसलिए संबंधित आग को कम करने के साथ वनों की कटाई पर भी रोक लगाने के प्रयासों को बढ़ाने की जरूरत है। यह अध्ययन जियोहेल्थ पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। वनों की कटाई को कम करने से कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन कम होता है और यह वैश्विक जलवायु परिवर्तन को धीमा करने के प्रयासों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। हमारा काम दर्शाता है कि वनों की कटाई और संबंधित आग को कम करने से स्वच्छ हवा और बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य भी होगा। स्थानीय और क्षेत्रीय फायदे वनों की कटाई को कम करने के लिए एक शक्तिशाली प्रोत्साहन हो सकता हैं। समुदाय के द्वारा संरक्षित वनों और अन्य संरक्षित क्षेत्रों की सहायता से इसे बढ़ाया जा सकता है। इस तरह के उपाय आग को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

प्रदूषित पानी पीने को लोग मजबूर : टॉक्सिक लिंक

गोवा गोवा के लोग शायद पानी के साथ प्लास्टिक का भी सेवन कर रहे हैं। यह चौंकाने वाला है लेकिन यह एक हकीकत है। दिल्ली स्थित गैर सरकारी संस्था टॉक्सिक लिंक ने अपने ताजा अध्ययन में इसकी पुष्टि की है। अध्ययन में गोवा के रिहायशी इलाकों से लिए गए कुल 288 टैप वाटर के नमूनों में 26 तरीके के सूक्ष्म और खतरनाक प्लास्टिक कणों की मौजूदगी मिली है। आपूर्ति वाले पेयजल में माइक्रोप्लास्टिक की मौजूदगी यह दर्शा रहा है कि पानी के स्रोतों तक प्रदूषण जारी है और प्रदूषण की रोकथाम करने वाली एजेंसियां इसे रोकने में विफल हैं। टॉक्सिक लिंक की ताजा रिपोर्ट क्लीन ड्रिंकिंग वाटर = ए पाइप ड्रीम में बताया गया है कि गोवाके पाइप वाले नलों (टैप वाटर) से पानी में सूक्ष्म प्लास्टिक (माइक्रोप्लास्टिक) के कण भी मौजूद हैं। यह अध्ययन मार्गो, पणजी, मापुसा, मार्सेल और कैनकोना के साथ गोवा के वाट ट्रीटमेंट प्लांट के नमूनों पर आधारित है। इन सभी जगहों के नमूनों में माइक्रोप्लास्टिक मिला है। माइक्रोप्लास्टिक ऐसे प्लास्टिक कण हैं जो 5 मिलीमीटर से भी कम आकार के होते हैं। इन्हें नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता। दुनियाभर में समुद्रों के पारिस्थितिकी के लिए इसे एक बड़ा प्रदूषक और खतरा माना जा रहा है। पीओपी और अन्य हाइड्रोफोबिक प्रदूषक, भारी धातु और रोगाणु जीवों के साथ यह भी एक बड़ा खतरा है। नमूनों में सबसे ज्यादा माइक्रोप्लास्टिक का स्तर गोवा के मापुसा में पाया गया, इसके बाद मार्सेल, फिर ओपा और मार्गो व पणजी, ओसोनोरा, कोनकोना और फिर सलाउलिम में मिला है। टॉक्सिसल लिंक की रिसर्चर प्रीती महेश कहती हैं कि यह एक गंभीर चिंता का विषय है। इन सूक्ष्म प्लास्टिक कणों का मानवों की सेहत पर बेहद प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। टैप वाटर में आने वाले माइक्रोप्लास्टिक को मानव की इंद्रिया नहीं जान सकती हैं। और संभव है कि वह इसे पी लेती हों। इस अध्ययन के मुख्य शोधार्थी डॉ महुआ साहा (एनआईओ) ने कहा कि गोवा में पानी का मुख्य स्रोत नदियां हैं।

जनसंपर्क संचालनालय की विशेष फीचर श्रृंखला

वन्य जीवों की प्रचुरता और जैविकी विविधताओं के लिए मशहूर कान्हा नेशनल पार्क...

प्रदेश में स्थापित नेशनल पार्कों के प्रति देशी पर्यटकों के साथ विदेशी पर्यटक बहुत तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। इनमें से एक है कान्हा नेशनल पार्क। यह पार्क वन सम्पदा, वन्य जीवों की प्रचुरता और जैविकी विविधताओं से लबरेज है। कान्हा नेशनल पार्क विलक्षण और अद्वितीय प्राकृतिक आवास के लिए जाना जाता है। कान्हा का संपूर्ण वन क्षेत्र वैभवशाली अतीत को आज भी संजोए हुए है, जिसकी वजह से यह पार्क देशी-विदेशी पर्यटकों को बरबस अपनी ओर खींचता है।मण्डला और बालाघाट जिले की सीमा से लगा यह पार्क प्राकृतिक और पर्यावरणीय गौरव के लिए जाना जाता है। क्षेत्रफल के लिहाज से इसका देश के सबसे बड़े राष्ट्रीय पार्कों में शुमार है। कोर वन मण्डल (राष्ट्रीय उद्यान) एवं बफर जोन वन मण्डल कान्हा टाईगर रिजर्व के अन्तर्गत आते हैं। इन दोनों वन मण्डल का क्षेत्रफल क्रमश- 940 और 1134 वर्ग कि.मी. है। राष्ट्रीय उद्यान में 91 हजार 743 वर्ग कि.मी. का क्षेत्रफल क्रिटिकल टाईगर हेबीटेट के रूप में अधिसूचित है। इसके अलावा टाइगर रिजर्व के अधीन एक वन्य-प्राणी अभयारण्य सेटेलाइट मिनी कोर-फेन अभयारण्य है, जो 110.74 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला है।

118 बाघ और 146 तेंदुए सहित अनेक वन्य-जीव है मौजूद- टाइगर रिजर्व में वन्य- प्राणी गणना आकलन 2020 के अनुसार 118 बाघ और 146 तेंदुए मौजूद हैं। बाघों में 83 वयस्क और 35 शावक बाघ है। इसके अलावा जंगली कुत्ता, लकड़ बग्घा, सियार,भेड़िया, भालू (रीछ), लोमड़ी, जंगली बिल्ली, जंगली सुअर, गौर, चीतल, बारासिंघा, सांभर, मेड़क-मेड़की, चौसिंघा, नीलगाय, नेवला, पानी कुत्ता (उद बिलाव), सेही, लंगूर, बंदर, मोर प्रजाति के वन्य-जीव उपलब्ध है। साथ ही स्तनधारियों की तकरीबन 43 प्रजाति, पक्षियों की 325, सरी सृप की 39, कीट की 500, मकड़ी की 114 और पतंगों और तितलियों की भी अनेक प्रजाति पर्यटकों को अपनी ओर खींचती हैं।

पार्क के यह स्थल है बेहद खास- फेन अभयारण्य - टाइगर रिजर्व की विशेष इकाई फेन अभयारण्य है। वर्ष 1983 में 110 वर्ग कि.मी. का क्षेत्र फेन अभयारण्य घोषित हुआ। यह क्षेत्र वन्य-जीव के आवासीय स्थल के रूप में पिछले वर्षों से, काफी विकसित हुआ है। इस क्षेत्र में पूर्व में 38 मवेशी गाय, भैंस रहकर वन क्षेत्र को नष्ट किया करती थी। वर्ष 1997-98 के मध्य यहाँ से सभी शिविरों को विशेष मुहिम से हटा दिया, तब से यहाँ के वन काफी अच्छे हो गए है जिससे अब यहाँ बाघ, तेंदुआ, बायसन, चीतल, सांभर, जंगली कुत्ता आदि विचरण करते दिखाई देते है।

श्रवणताल - कान्हा से 4 कि.मी. की दूरी पर श्रवणताल है। पौराणिक मान्यता अनुसार राजा दशरथ के तीर से मातृ-पितृ भक्त श्रवण कुमार की मृत्यु इसी स्थान पर होना माना जाता है। यहाँ कई साल पहले तक मकर संक्राति का मेला लगता था। श्रवणताल में वर्ष भर पानी रहता है, जिसके कारण नीचे स्थित मेन्हरनाला और देशीनाला क्षेत्र में पानी रिसने से हमेशा नमी बनी रहती है, जो बाघ के लिए उपयुक्त आवास है। बारासिंघा पानी में घुसकर यहाँ जलीय पौधों को अपना भोजन बनाते है।

किसली मैदान (चुप्पे मैदान) - पार्क का यह मुख्य प्रवेश द्वार है। वर्ष 1986-87 में यहाँ बसे लोगों को पार्क के बाहर कपोट बहरा में विस्थापित किया गया था। कई दशक पहले यहाँ आरा मिल का ऑफिस लगा करता था।

डिगडोला - किसली परिक्षेत्र के उत्तर पूर्व पहाड़ी में एक बैलेंसिंग रॉक संतुलित चट्टान पर अपना संतुलन बनाये रखी है। इस क्षेत्र को डिगडोला कहते हैं। आदिवासियों के लिए यह पूजा स्थल के रूप में विख्यात है।

कान्हा मैदान - कान्हा के चारों ओर घास के मैदान स्थित हैं। यहाँ पहले खेती हुआ करती थी। विस्थापन में 26 परिवारों को वर्ष 1998-99 में मानेगाँव में बसाया गया। इसके बाद खेत घास के मैदान में परिवर्तित हो गये, जिसके कारण शाकाहारी वन्य-प्राणियों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई।

कान्हा एनीकट - देशीनाला में बना एनीकट जल संवर्धन के साथ वन्य जीवों के लिये बहु-उपयोगी माना जाता है। इस एनीकट का निर्माण 72 साल पहले हुआ था।

चुहरी - कान्हा से 3 कि.मी. की दूरी पर चुहरी क्षेत्र है। पानी वाली जगह का चुहरी कहा जाता है। यह क्षेत्र बाघों के आवास के लिए उपयुक्त माना जाता है।

बारासिंघा फेंसिंग - इसका निर्माण पचास साल पहले हुआ था। बारासिंघा का संवर्धन इसी क्षेत्र में ही किया जाता है। इनके संबंध में अनुसंधान/अनुश्रवण आदि के कार्नीवोरस प्रूफ फेंसिंग के अंदर कुछ बारासिंघा को आवश्यकतानुसार यहाँ पर रखा जाता है। बारासिंघा की संख्या में वृद्धि होने पर उन्हें बाद में मुक्त कर दिया जाता है।

बिसनपुरा - कान्हा-मुक्की मार्ग में बिसनपुरा मैदान स्थित है। पहले इस स्थान में छोटा गाँव हुआ करता था। वर्ष 1974-76 के मध्य यहाँ से 13 परिवारों को विस्थापित करके भिलवानी वनग्राम समूह में बसाया गया। वर्तमान में इस स्थान में काफी अच्छे चारागाह विकसित हो जाने से, काफी संख्या में पर्णभक्षी आते हैं। पानी की प्रचुर मात्रा रहने से कान्हा की तरफ से पहाड़ पार से वन्य-जीव का इधर आवागमन काफी अच्छा रहता है। इस इलाके में बारहसिंगा, चीतल, बायसन, जंगली सुअर, भालू और गिद्ध दिखाई देते हैं।

सोंढर एवं सोंढर तालाब - कान्हा-मुक्की मार्ग पर सोंढर मैदान स्थित है। पहले इस जगह गाँव हुआ करता था। वर्ष 1974-76 के बीच यहाँ 11 परिवारों को विस्थापित कर अन्यत्र बसाया गया। सोंढर तालाब काफी पुराना है। खेतों की जगह चारागाह विकसित हुए जो बारासिंघा के लिये उपयुक्त है। इस क्षेत्र में एक ही क्रम में पाँच तालाब है, जो ऊपर से नीचे घटते क्रम में है। इसके कारण जल संवर्धन का उचित उपयोग होने से क्षेत्र बारहसिंगा, वाइल्ड बोर, चीतल और बायसन के लिये यह उपयुक्त है।

घोरेला - सोंढर से कुछ दूरी पर घोरेला मैदान है। वर्ष 1974-76 के पहले यहाँ गाँव था जिसमें से 22 परिवारों को विस्थापित करके मुक्की एवं धनियाखोर में बसाया गया। यहाँ बारासिंघा काफी दिखाई देते हैं।

लपसी कबर - बिसनपुरा से कुछ दूरी पर मुक्की की तरफ खापा तिराहे पर, मार्ग के किनारे लपसी कबर है। लपसी वन्य-जीवों का ज्ञाता था। पूर्व में जब शिकार की अनुमति थी तब वह शिकारियों का सहयोगी था। ऐसी किवदंती है, कि लपसी, बाघ के शिकार के समय अपनी पत्नी को गारे के रूप में प्रयोग किया करता था। एक दिन शिकार के समय बाघ द्वारा उसकी पत्नी पर हमला बोलने पर वह स्वयं बाघ से भिड़ गया जिससे दोनों की मृत्यु हो गई। मान्यता यह भी है कि लपसी की कब्र में पत्थर चढ़ाने पर बाघ दिखाई देता है।

सौंफ - औरई मार्ग पर स्थित सौंफ क्षेत्र पहले गाँव था। आज से 52 साल पहले इस गाँव के 29 परिवारों को भानपुर खेड़ा ग्राम में विस्थापित किया गया था। वर्तमान में अच्छे खासे-घास के मैदान हैं। यह क्षेत्र बारासिंघा के लिये मुफीद माना जाता है। जल संवर्धन के लिए कई तालाब तथा डेम हैं। क्षेत्र में बारासिंघा और चीतल मुख्य रूप से है। वर्ष 1993 के जुलाई माह में वनरक्षक स्व. श्री चंदन लाल चाकट शिकारियों के साथ लड़ते हुए, यहीं पर शहीद हुए थे। तब से इस सर्किल का नाम चंदन सर्किल है। सौंफ क्षेत्र बारासिंघा के लिए सर्वश्रेष्ठ आवास स्थल है।

रौंदा - सौंफ से 4 कि.मी. दूरी पर «रौंदा» क्षेत्र स्थित है। यह क्षेत्र भी पहले गाँव था। वर्ष 1974-76 के मध्य यहाँ से 53 परिवारों को प्रेमनगर, विजयनगर और कारीखाह में बसाया गया। इस क्षेत्र में स्थानों पर चारागाह ही है। यह बारहसिंघा का आवास है।

दरबारी पत्थर-नसेनी पत्थर - चिमटा कैम्प के पीछे एक बड़े आकार का पत्थर है, जो लगभग 20 मीटर चौड़ा और 35 फीट ऊँचा है। इस पत्थर को «नसेनी पत्थर» भी बोला जाता है। इसके ऊपर छोटे-छोटे पत्थर कुर्सीनुमा रखे है। किवदंती है, कि दानव लोग यहाँ बैठकर दरबार करते थे।

ऐसे पहुँचे नेशनल पार्क- कान्हा नेशनल पार्क पहुँचने के लिए पर्यटक वायु मार्ग से निकटतम जबलपुर 100 कि.मी., रायपुर 250 कि.मी. और नागपुर 300 कि.मी. है। इसी तरह निकटतम रेलवे स्टेशन नैनपुर, गोंदिया एवं जबलपुर है। नैनपुर से मंडला जिले के खटिया एवं सरही गेट पहुँचा जा सकता है।

वन्य-प्राणियों की सुरक्षा में 962 अमला है तैनात- केटीआर में वन्य-प्राणियों के सुरक्षा के लिए सहायक वन संरक्षक, वन क्षेत्रपाल, उपवन क्षेत्रपाल, वनपाल, वनरक्षक, स्थायीकर्मी, सुरक्षा या समिति श्रमिक और भूतपूर्व सैनिक सहित 962 व्यक्ति तैनात है। इसके अलावा रिजर्व क्षेत्र के लिए 162 पुरुष और 13 महिलाएँ गाइड का दायित्व निभाती है।

हर साल बढ़ती है पर्यटक संख्या- राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक नियमित रूप से «कान्हा टाइगर रिजर्व» पहुँचते हैं। यह सामान्यतः अक्टूबर से 30 जून तक खुला रहा करता है। नेशनल पार्क में प्रवेश के लिए खटिया, किसली, सरही एवं मुक्की 4 गेट हैं। इसी प्रकार मध्यप्रदेश टूरिज्म सहित अन्य बड़े स्थानों के होटल भी हैं। वर्ष 2019-2020 में कोर जोन में 90 हजार 135 देशी, 13 हजार 875 विदेशी और बफर जोन में 13 हजार 928 देशी तथा 305 विदेशी पर्यटकों ने पर्यटन किया। वर्ष 2020-2021 में कोर जोन में डेढ़ लाख से ज्यादा देशी और 109 विदेशी पर्यटक आए। बफर जोन में 19 हजार 395 देशी तथा 6 विदेशी पर्यटकों ने पर्यटन किया। वर्ष 2020-21 में कोर जोन में कुल डेढ़ लाख से ज्यादा तथा बफर जोन में 19 हजार 401 पर्यटक आए।

पार्क प्रबंधन को मिला सम्मान- वर्ष 2019 में 'अंग्रेजी भाषा में सर्वश्रेष्ठ प्रकाशन' श्रेणी के तहत कान्हा कॉफी टेबल बुक को भारत सरकार की ओर से पार्क प्रबंधन के लिए «भारत पर्यटन पुरस्कार» से सम्मानित किया गया। वर्ष 2020 में 'पार्क को अनुभूति कार्यक्रम' के उत्कृष्ट संचालन के लिए राज्य सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

ऋषभ जैन

क्या 50 लाख साल बाद, जल संकट से होने वाले पलायन से फिर जूझ रही है दुनिया?

नई दिल्ली। दिल्ली के श्रम बाजारों में पिछले कुछ हफ्तों से भीड़ बढ़ने लगी है। अनौपचारिक कामगारों के ये बाजार आसपास के राज्यों, विशेष रूप से उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र के मौसम की स्थिति का पैमाना हैं। मानसून का यह मौसम अनिश्चितताओं से भरा है। दिल्ली के बाजारों में अनौपचारिक कामगारों की संख्या में वृद्धि भविष्य के सूखे का एक निश्चित संकेत है। कृषि के मौसम के मध्य इस पलायन को आमतौर पर पानी की कमी से जोड़कर देखा जा रहा है। श्रम बाजारों को ट्रैक करके और पलायन के लिए चर्चित राज्यों के प्रमुख रेलवे स्टेशनों पर श्रमिकों की बढ़ती भीड़ देखकर अंदाजा लगाया जा सकता है कि उनकी आजीविका कितने गहरे संकट में है।

हताशा भरे इस पलायन के मूल में हमेशा पानी की उपलब्धता रहती है। इस तरह के पलायन को देखकर पुराने घटनाक्रम जेहन में उभरने लगते हैं। करीब 50 लाख साल पहले पूर्वी अफ्रीका में पड़े सूखे ने हमारे पूर्वजों को जल समृद्ध स्थानों में पलायन के लिए बाध्य कर दिया था। कहा जाता है कि तभी से मनुष्य पानी के पीछे भाग रहा है। आवास और भोजन से अधिक पानी के लिए पलायन हुआ है। ओडिशा से दूरस्थ केरल में पलायन की प्रमुख वजह भी पानी था। इस पानी के संकट ने जीवनयापन को विभिन्न तरीकों से प्रभावित किया था। पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों का पतन कृषि विफलताओं का कारण बना, जिसके परिणामस्वरूप बुंदेलखंड क्षेत्र से पलायन हुआ। अगर हम इतिहास पर नजर डालें तो पाएंगे कि प्राचीन काल में बस्तियों उन्हीं स्थानों पर बसाई गईं जहां पानी उपलब्ध था। वर्तमान में इसकी कमी ने एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर पलायन बढ़ा दिया है। लोग जल की उपलब्धता और बेहतर आजीविका के लिए भी अपना पैतृक आवास छोड़ रहे हैं। प्राचीन काल में कृषि और शिकार आजीविका के प्रमुख साधन थे। समय के साथ हमने आजीविका के कई साधन बढ़ा लिए हैं। सवाल उठता है कि क्या दुनिया पानी की कमी के कारण एक और परिवर्तनकारी पलायन का गवाह बनेगी? गंभीर जल संकट का प्रमाण हम सबके समक्ष है। जलवायु परिवर्तन से यह संकट और बढ़ गया है। विभिन्न अनुमानों से पता चलता है कि धरती के 66 प्रतिशत भूमि क्षेत्रों में पानी की कमी हो रही है। भीषण सूखे का सामना कर रही जनसंख्या 21वीं सदी के अंत तक दोगुनी हो सकती है। हाल ही में विश्व बैंक की रिपोर्ट ÷वेब एंड फ्लो= वाटर, माइग्रेशन एंड डेवलपमेंट÷ 64 देशों से एकत्रित आंतरिक पलायन के आंकड़ों का विश्लेषण करती है। ये आंकड़े 1960 से 2015 के दौरान 189 जनगणनाओं से लिए गए हैं। रिपोर्ट में दलील दी गई है कि समकालीन दुनिया में आंतरिक पलायन की प्रमुख वजह पानी की कमी रही है। किसी बस्ती के लिए पूंजी मानी जाने वाली और सामाजिक विकास के लिए जरूरी विरासत में मिली जल संरचनाओं में कोई बदलाव नहीं हुआ है, जबकि हाल में मानव जनित परिवर्तनों के कारण हम पानी के प्रति और संवेदनशील हुए हैं, 50 लाख साल पहले से भी अधिक। आंकड़ों के इस व्यापक विश्लेषण से यह स्थापित होता है कि कम वर्षा के कारण 1970 और 2000 के बीच पलायन में 10-11 प्रतिशत वृद्धि हुई है। रिपोर्ट के अनुसार, ÷हैरानी की बात है कि बारिश अथवा बाढ़ (वेट शॉक) के मुकाबले सूखे (ड्राई शॉक) के कारण पलायन पर 5 गुणा असर पड़ता है। बार-बार सूखे के झटकों के कारण स्थानीय लोग खुद को अनुकूलित नहीं कर पाते।÷ पानी की कमी से उठने वाली पलायन की लहर विकासशील और गरीब देशों में अधिक प्रबल रही है। पलायन के विभिन्न कारण हैं, जैसे बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश, उच्च शिक्षा की चाह, संघर्ष और भीषण आपदाएं। बहुत से देशों में सूखा या पानी की कमी से होने वाले पलायन को शिक्षा के लिए होने वाले पलायन के बाद रखा गया है। जलवायु परिवर्तन ने इस संकट को और बढ़ा दिया है। पिछले तीन दशकों में दुनिया की औसतन 25 फीसदी आबादी को हर साल असामान्य बारिश का सामना करना पड़ा। इस तरह के झटकों का लोगों पर बड़ा आर्थिक प्रभाव पड़ता है। जलवायु परिवर्तन को देखते हुए अनुमान लगाया जा रहा है कि आने वाले समय में सूखा बढ़ेगा जिससे पलायन और तेजी से बढ़ सकता है। विश्व बैंक की रिपोर्ट में पाया गया है कि किसी क्षेत्र में सबसे गरीब कमा बारिश का दंश झेलने को अभिशप्त होंगे। रिपोर्ट में कहा गया है कि 80 प्रतिशत निर्धनतम आबादी पर्याप्त पानी नहीं होने के बावजूद पलायन नहीं कर पाएगी क्योंकि आर्थिक तंगी आड़े आएगी।

- साभार

एशियाई मानसून में अहम भूमिका निभाती है तिब्बती पठार पर जमीं ताजे पानी की झीलें

तिब्बत। तीसरा ध्रुव कहलाने वाला तिब्बत का पठार दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे ऊंचा पठार है। यह पृथ्वी की जलवायु और जल चक्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका एशियाई मानसून प्रणाली के बनने में और पीली, यांग्त्ज़ी, मेकांग, साल्विन, ब्रह्मपुत्र और सिंधु नदियों जैसी बड़ी एशियाई नदियों की उत्पत्ति में अहम भूमिका है। तिब्बती पठार पर जमी ताजे पानी की झीलें लेंस की तरह काम कर सूरज की गर्मी जमा करती हैं।

इस ऊंचे पहाड़ या अल्पाइन पर स्थित झील प्रणाली किंघई-तिब्बत पठार के ऊपर स्थित है जिसे आमतौर पर तिब्बती पठार के रूप में जाना जाता है। शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि झीलें जमीन और वायुमंडल के बीच गर्मी के बदलाव को प्रभावित करती हैं, जिससे क्षेत्रीय तापमान और वर्षा प्रभावित होती है। लेकिन तिब्बती झीलों के प्राकृतिक गुणों और गर्मी संबंधी (थर्मल) गतिशीलता के बारे में बहुत कम जानकारी है, खासकर सर्दियों के महीनों के दौरान जब झीलें बर्फ से ढंकी होती हैं। उस समय पर तापमान 6 डिग्री सेल्सियस से अधिक हो जाता है। गर्मी पानी से बर्फ के आवरण को पिघलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक नए अध्ययन में, किरिलिन और सहयोगियों ने पठार पर सबसे बड़ी मीठे या पानी की झील (610 वर्ग किलोमीटर) चीन की नोरिंग झील को देखा, जो आमतौर पर दिसंबर से अप्रैल के मध्य तक बर्फ में ढंकी रहती है। टीम ने सितंबर 2015 में झील के सबसे गहरे हिस्सों में से एक में तापमान, दबाव और विकिरण लॉगर्स के बारे में पता लगाया। उन्होंने झील की सतह के जमने के बाद एक नियम विरुद्ध गर्मी की प्रवृत्ति देखी, क्योंकि सतह पर सौर विकिरण ने बर्फ के नीचे ऊपर के पानी की परतों को गर्म कर दिया था। पूरे बर्फ के आवरण के एक महीने के भीतर मजबूत संवहन मिश्रण ने नोरिंग झील को पूरी तरह से अपनी औसत गहराई तक मिश्रित कर दिया। यह अध्ययन जियोफिजिकल रिसर्च लेटर्स में प्रकाशित हुआ है। अधिकांश बर्फ से ढकी झीलों में, पानी का तापमान आमतौर पर अधिकतम घनत्व तापमान से नीचे रहता है, लेकिन यहां शोधकर्ताओं ने पाया कि बर्फ के मौसम के मध्य तक पानी का तापमान अधिकतममीठे पानी के घनत्व से अधिक था। जिसने जाड़े का मौसम के अंत में बर्फ के पिघलने को तेज कर दिया। जैसे ही बर्फ टूटती है, पानी का तापमान लगभग 1 डिग्री सेल्सियस गिर जाता है, केवल एक या दो दिनों में वातावरण में लगभग 500 वाट प्रति वर्ग मीटर गर्मी छोड़ देता है। अध्ययन से पता चलता है कि झीलें बर्फ के नीचे निष्क्रिय नहीं रहती हैं। लेकिन प्रभाव स्थानीय झील प्रभावों से बाहर हैं। एक साथ लिया जाए, तो पठार के पार हजारों झीलें बर्फ के पिघलने के बाद हीट फ्लक्स हॉट स्पॉट हो सकती हैं, सौर विकिरण से अवशोषित कर गर्मी निकल सकती हैं और तापमान, संवहन और जल द्रव्यमान प्रवाह में परिवर्तन को वैश्विक स्तर पर संभावित प्रभावों के साथ चला सकती हैं।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008